बिरसा मुण्डा आंदोलन

डॉ.मुकेश कुमार ठाकुर, पी एच.डी., इतिहास विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय कामेश्वरनगर, दरभंगा, बिहार, भारत मो. - 9473009909 email – mkthakur411983@gmail.com

.....

सारांश

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम मे आदिवासी आंदोलनों मे 'बिरसा मुण्डा आंदोलन', सर्वाधिक संगठित व व्यापक आंदोलन था, जिसके मुख्य नेता बिरसा मुण्डा थे। आदिवासी समाज मे भीषण गरीबी थी। उस पर से अंग्रेजो का अत्याचार से वे बौखला उठे। धर्म परिवर्तन भी उनकी स्थिति को बेहतर नही बना सकी। अपनी जमीन को वे हाथ से निकलते देख रहे थे। अकाल के समय भी सिपाही माल गुजारी वसूल करने आए, और मालगुजारी न मिलने पर घर-घर मे घुस-घुस कर औरतों के गहने छीनने लगा साथ ही महिलाओं के साथ बलत्कार भी शुरू कर दिया।

बिरसा मुण्डा यह देखकर आपे से बाहर हो गया, उन्होंने मुण्डाओं का जागृत कर गोरे और जमींदारों के विरूद्ध खड़ा किये अपने आपको भगवान साबित किया। उसने मंदिर पूजा में विश्वास नहीं किया। उसने देवी-देवताओं की उपासना की जगह केवल सिंगबोंगा की उपासना करने को कहा। अनुयायियों को यज्ञोंपवित करने को कहा।

उसने एक सेवा दल नामक संघ की स्थापना की। विद्रोह की तैयारी के लिए वे महारानी विक्टोरिया का पुतला बनाकर उस पर तीरंदाजी का अभ्यास करते। उनके अनुयायी गाँव'-गाँव जाकर लोगों को सरकार के विरूद्ध संगठित करके। सईल रकब पहाड़ी पर आंदोलनकारी बैठक कर रहे थे। अंग्रेज उन्हें आत्मसर्म्पण करने को कहा, लेकिन आत्मसर्पण नहीं करने पर उन्होने गोलियों की बौछार बरसाने शुरू कर दिये इनाम के लालच मे बिरसा मुण्डा को गिरफ्तार करवा दिया गया। जेल में कष्ट झेलते हुए आखिरी साँस ली। और इस तरह झारखण्ड का ज्वालामुखी का अंत हुआ।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास के पन्नों में एक ऐसा अध्याय जुड़ा है जिसके जाने बिना हम इसकी परिकल्पना भी नहीं कर सकते है। भले ही आज हम स्वतंत्र भारत में खुली हवा की सांस लेते है, लेकिन इसके पीछे अनेक गाथाएँ छिपी हुई है, इन्हीं छुपी हुई गाथा में एक गाथा है-बिरसा मुण्डा आंदोलन। जिसके मुख्य नेता थे- बिरसा मुण्डा। जिसे झारखंड का ज्वालामुखी भी कहते है।

१९ वीं सदी के आदिवासी आंदोलनों में बिरसा मुंडा आंदोलन, सर्वाधिक संगठित व व्यापक आंदोलन था जो वर्तमान में झारखण्ड राज्य के राँची जिले के दक्षिणी भाग में १८९९–१९०० ई. में हुआ। इसे 'मुण्डा उलगुलान' (मुण्डा महाविद्रोह) भी कहा जाता है।

आदिवासी जन-जीवन, उनके शौर्य, संस्कृति तथा अस्मिता के सवालों पर नियमित लिखने वाले प्रसिद्ध लेखक, पत्रकार एवं चिंतक हेराल्ड एस तोपनी कहते है कि ''यह कितनी अजीब बात है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में आज तक बिरसा मुंडा, तिलका मांझी और सिद्धू-कान्हू, रूदू-काना जैसे अमर क्रांतिकारियों को वह स्थान नहीं मिल पाया है, जिसके वे अधिकारी है। लेकिन शायद यह अनायास भी नहीं है। भारतीय समाज में आदिवासियों की स्थिति, बहुसंख्यक और उनमें भी सत्ता-सम्पन्नता के शीर्ष पर विराजमान एक छोटे, पर मुखर तबके का आदिवासियों (दलितो के भी) के प्रति रवैये के मद्देनजर कहा जा सकता है कि शासक वर्ग के हित में इतिहास लेखन की जो विश्वव्यापी परंपरा रही है, भारत में भी दलित तबके के संघर्षों और उसके नायकों को हाशिये पर डालने की उसी मानसिकता के तहत बिरसा मुंडा जैसा अमर नायक आज भी सिर्फ आदिवासियों का है। एक क्षेत्रीय नेता भर माना जाता है। एक तरफ तो अब तक बिरसा जैसे क्रांतिकारियों की उपेक्षा की जाती रही और दूसरी ओर साम्प्रदायिक सोच वाले कुछ तत्त्व इतिहास की गलत व्याख्या कर बिरसा को हिन्दू वीर और महज ईसाई विरोधी सिद्ध कर बिरसा की विरासत का नाजायज इस्तेमाल कर रहे है।''[१]

'मुण्डा' एक प्रकार के आदिवासी लोग होते है जो झारखंड, मध्य प्रदेश और ओडिशा के जंगलों में बसे हुए है। ये लोग प्रायः छोटी-छोटी बस्तियों मे रहते है और इनके घर मिट्टी तथा बाँस के बने होते हैं। ये लोग बहुत सरल और मेहनती होते है।[२]

बिरसा मुण्डा का जन्म १५ नवम्बर १८७५ ई. को झारखंड राज्य के राँची जिले के खूँटी अनुमण्डल के अड़की प्रखंड के तमाड़ थाना के अन्तर्गत उलिहातू गाँव में हुआ। उनके पिता का नाम सुगना मुंडा और माता का नाम कदमी या करमी था।

उलिहातू का मतलब होता है- आमों का गाँव। उलिहातू के दक्षिण मे एक पहाड़ी है- सिलीबुरू। दक्षिण-पूर्व के कोने में दो पहाड़ियाँ है- मरंग मिली और हडींग सिली। पहाड़ियों के जंगल में शालवृक्षों से लकदक, ऊँचे-ऊँचे

पेड़ों के झुरमुट में बसा है उलिहातू। जो बिरसा के पूर्वजों का गाँव है। मुंडा गाँव मे पूर्ती गोत्र के लोग बसते है। उलिहातू गाँव के निकट ही एक छोटी नदी बहती है- सेरेंग इकिर। बिरसा बारह साल की उम्र मे ७ मार्च १८८६ में ईसाई धर्म में दीक्षित हुआ। बिरसा का नाम दाऊद पूर्ती रखा गया। बिरसा का ननिहाल चलकद था जहाँ उसका बचपन गुजरा, साथ ही वह वहाँ भेड़-बकरियाँ चराया करता था।[३] उसकी प्रारंभिक शिक्षा अपने मौसी के यहाँ खटांगा में हुई।[४] चलकद से वह बुर्जू चला आया और जर्मन मिशन के स्कूल मे दाखिला ले लिया जहाँ से बिरसा निम्न प्राथमिक परीक्षा पास कर, आगे की पढ़ाई करने के लिए १८८६ ई. में चाईबासा चला गया। १८८६ ई. से १८९० ई. तक बिरसा चाईबासा में रहा।

बाहरी लोगों के प्रवेश से झारखंड के आदिवासियों की भूमि व्यवस्था पूरी तरह बिखर चुकी थी। बहुत से जमींदारों ने छल-बल से मुण्डों की जमीन हथिया ली थी। मुण्डा अंचल (क्षेत्र) में ही जमीन मुण्डों के हाथ से निकलकर अन्य लोगों के हाथों में जा रही थी। इससे उनके अन्दर असंतोष की आग बहुत दिनों से सुलग रही थी। अपने सरदारों के नेतृत्व में मुण्डों ने इसके खिलाफ १५ साल तक आंदोलन चलाया था। उनका यह आंदोलन 'सरदारी लड़ाई' के नाम से मशहूर हुआ।[५] मुण्डे दावा कर रहे थे कि जमीन के मालिक वे हैं, जमींदार नहीं। इसलिए वे किसी भी तरह का राजस्व या लगान जमींदारों को न देंगे। यह लगान अथवा कर सीधे गोरे प्रशासन को देने को तैयार थे। सबसे पहले मुड़ाओं का आंदोलन राँची से आरंभ हुआ जो बहुत शीघ्र ही सिंहभूमि के अनेक क्षेत्रों में आग की तरह फैल गयी। इस आंदोलन का कारण जंगलों को संरक्षित करार दिया जाना और मुंडों के हाथ से वनस्पति को छीन लिया गया था।[६]

बिरसा मुण्डा बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि का था। उसे समझने में देर नहीं लगी कि आदिवासी सामाजिक व्यवस्था में अनेकों दोष थे जो आदिवासियों के कष्ट के लिए जिम्मेवार थे। आदिवासी समाज मे भीषण गरीबी थी और दाने-दाने को मोहताज थे। प्रमोदानंद दास ने अपनी पुस्तक 'बिहारः इतिहास एवं संस्कृति' में लिखा है कि एक बार स्वयं बिरसा ने एक औरत का कब्र खोदकर मृतक महिला के आभूषण चुरा लिये और उसे बेचकर परिवार का पेट भरना चाहा।[७]

सरदारी आंदोलन राँची से आरंभ हुआ और शीघ्र ही सिंहभूम में फैल गया। इस आंदोलन का फौरी कारण जंगलो का संरक्षित करार दिया जाना और इस प्रकार मुण्डा के हाथ से छीन लिया जाना था। सरदारों के नेतृत्व में मुंडे अपना आंदोलन चला रहे थे। लेकिन १५ वर्ष बाद भी जब कोई परिणाम निकलते नजर न आया तो मुण्डा सरदारों के सामने प्रश्न खड़ा हो गया कि वे अब क्या करें। इस तरह बिरसा मुण्डा सामने आये और सब सरदार उनके साथ मिल गये। बिरसा अंग्रेजों के राज को खत्म कर मुण्डा राज कायम करना चाहते थे और मुण्डा को भी अपनी मुक्ति का यही रास्ता सूझ पड़ा।

कितने ही मुण्डे बेहतरीन जिन्दगी की उम्मीद से ईसाई बन गये थे। लेकिन जल्द ही उन्होंने अनुभव किया कि अपनी जाति और पुराना धर्म खो देने पर भी उनकी जिन्दगी बेहतर नहीं हुई। इसलिए उसने ईसाई धर्म से भी विद्रोह किया। उन्हें यह धर्म भी ढ़कोसलों से भरा और शोषण का हथियार मालूम हुआ। इसीलिए उन्होंने अपने विद्रोह और हिंसात्मक कार्यो का दिन ईसा का जन्मदिन या एक दिन पहले चुना और कितने ही दुश्मनो का खून बहाया था। उनके विद्रोह के तीन उद्देश्य होते हुए भी मुख्य कारण जमीन और जंगल छीना जाना था। इन पर अपना अधिकार जमाने के लिए ही उन्होंने विद्रोह का सहारा लिया। अंग्रेजों को जमींदारों का मददगार पाकर वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जब तक इन अंग्रेजों को मार भगाया नहीं जाता तब तक मुण्डों के हाथ से जमीन निकलती जाएगी। इसी वजह से जमीन की उनकी लड़ाई ने मुण्डा राज की लड़ाई का रूप धारण किया। ईसाई धर्म अंग्रेजों का राज बनाये रखने का हथियार था, इसलिए उसके खिलाफ भी वे गये।[८]

कुमार सुरेश सिंह ने लिखा है कि बिरसा का एक मुक्तिदाता के रूप में आविर्भाव कोई अनायास घटना नहीं थी। तत्कालीन परिस्थितियों एवं विभिन्न धर्मावलम्बियों के सम्पर्क ने ही बिरसा को भगवान बनने में सहायता पहुँचायी। दूर-दूर से पुरूष, स्त्री, बूढ़े, बच्चे सभी प्रकार के लोग नियमित रूप से उसके उपदेशों को सुनने आया करते थे और उसका प्रवचन सुनकर आनंदित होते थे। बिरसा उनसे अंधविश्वासों से लड़ने को कहता। अनेक देवी-देवताओं की उपासना करने की जगह उसने लोगों को केवल सिंगबोंगा की उपासना करने को कहा क्योंकि सम्पूर्ण ब्राह्माण्ड का निर्माता सिंगबोंगा ही था ।

इस तरह बिरसा ने एकेश्वरवाद के नाम पर लोगों को एकजुट करना चाहा। उसने पशु-बलि का विरोध किया। हड़िया सहित किसी भी प्रकार के शराब पीने की मनाही कर दी गयी। उसने अपने अनुयायियों को यज्ञोपवीत करने को कहा। हृदय की शुद्धता पर जोड़ दिया। उसने मंदिर पूजा में विश्वास नहीं किया। सिंगबोंगा की पूजा गाँव के सरना में ही की जाती थी । बिरसा ने पारंपरिक ढंग से पूजा करने पर ही जोर दिया उसने एक प्रार्थना की

पुस्तक भी तैयार की थी। निःस्वार्थ सेवा, सादा जीवन एवं उच्च आचरण से उसने लोंगों में अपनी ओर आकर्षण पैदा किया लोग उसे अलौकिक समझने लगे। उसकी ख्याति मुंडा प्रदेश में दूर-दूर तक फैल गयी।[९]

१८९४ में सारे देश में भीषण अकाल पड़ा था। मुट्ठी भर अनाज को मोहताज छोटानागपुर के बीच बेर और जामुन के पेड़ों की छाल उबाल कर पी लिया करते थे। पर अंग्रेजी फाइलों में विवेक के शब्द कहाँ थे? सिपाही यथा समय मालगुजारी वसूल करने आ गए। न मिलने पर उन पर अत्याचार शुरू हुआ। घर में घुस-घुस कर वे औरतों के गहने छीनने लगे और गहने न मिलने पर महिलाओं के साथ बलात्कार भी शुरू कर दिया। बिरसा यह सब देखकर आपे से बाहर हो गया। उसकी आँखों से शोले निकलने लगे। उसने गोरी सरकार के चिर-परिचित आतंक से भयभीत युवाओं को ललकाड़ा और कुल्हाड़ी के एक वार में ही हेड कांस्टेबल यूसुफ खान का सिर धड़ से अलग कर डाला। कांस्टेबल गुलाब सिंह ने गोली चलानी चाही, तो तीर के विष ने उसका काम भी तमाम कर दिया। बाकी लोग अपनी जान बचा कर भाग गए। छोटानागपुर के इतिहास में गोरे आतंक के हिंसक विरोध की अभूतपूर्व घटना था। उस समय राँची के डिप्टी कमिश्नर एच.सी. स्ट्रीट फील्ड थे। उनहोंने बिरसा मुण्डा पर वारंट जारी कर दिया।[१०]

मुंडाओं को जागृत करने और जमींदारों तथा गोरों के विरूद्ध खड़ा करने के लिए १८९५ ई. में उन्होंने अपने को भगवान का अवतार घोषित किया और इस लोक और परलोक को बचाने आए हैं। उन्होंने प्रचार कि जो मुंडा लड़ाई में उनका सहयोग नहीं करेंगे उनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। युवा बिरसा ने यह बात फैलाना शुरू कर दिया कि अब यहाँ मुंडाराज आरम्भ हो गया है और महारानी विक्टोरिया का राज समाप्त हो गया है। उन्होंने मुंडाओं को आदेश दिया कि किसी को भी राजस्व न दे और जमीन का उपभोग बिना राजस्व दिए ही करें। अंग्रेजी सरकार का फरमान अब कोई भी मानकर न चले। इससे अंग्रेज सरकार का चिंतित होना स्वाभाविक था। इसी बीच अफवाह फैली कि जो भी बिरसा का मत मानकर न चलेगा, उसे कत्ल कर दिय जाएगा। अंग्रेजों को यह अच्छा मौका मिल गया।[११]

१६ अगस्त १८९५ को बीस वर्षीय नौजवान बिरसा को गिरफ्तार करने तमार का हेड कांस्टेबल चलकद गया। मुण्डों ने उसको अच्छी तरह अपमानित कर चलकद से निकाल दिया। २४ अगस्त की रात को बिरसा जब अपने घर में सो रहे थे, अंग्रेजी सरकार की पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया।[१२] यह बिरसा मुण्डा की पहली गिरफ्तारी थी। बिरसा की गिरफ्तारी की बात आदिवासियों के बीच आग की तरह फैल गयी। बड़ी संख्या में लोग चलकद में आकर जमा हो गये और बिरसा की झोपड़ी की पूजा करने लगे। वे बिरसा एवं उसके साथियों की मुक्ति की मांग करने लगे। उन्होंने शांतिपूर्ण ढंग अपनाकर आंदोलन को आगे बढ़ाया।[१३] बिरसा और उनके १५ साथियों पर बगावत फैलाने के इरादे से अफवाहे फैलाने का अभियोग लगया और दो साल की कड़ी सजा दे दी गयी। बिरसा को ५० रुपये का जुर्माना भी हुआ जिसे न चुकाने पर ६ माह उसे और राँची जेल में रहना पड़ा।

बिरसा आंदोलन का दूसरा चरण तब शुरू हुआ जब इंगलैंड की महारानी विक्टोरिया के शासन की हीरक जयंती के अवसर पर सजा की मियाद पूरी कर उसे नवम्बर १८९७ के उत्तरार्द्ध में अपने साथियों के साथ रिहा कर दिया गया। जेल से रिहा होने पर उसकी देश-प्रेम की भावना कुछ और संवर गयी थी। जेल से निकलने पर वे चलकद पहुँचा और एक 'सेवा दल' की स्थापना की।

जेल से निकलते ही उसने पुनः अपने अनुयायियों को जमा करना शुरू किया। उसने अब सरकार के अंतिम फैसला कर लेने का निश्चय किया। उसने महसूस किया की आदिवासियों के शोषण के लिए जमींदार और सरकार दोनों उत्तरदायी थे। अस्तु आदिवासियों की स्थिति में बेहतरी के लिए सरकार का ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है। १८९७ में होलिका दहन के दिन उसने अपने प्रमुख साथियों के पास संदेश भेजा। सिम्बुआ में उन्हें एकत्रित कर उन्हें विद्रोह की योजना से अवगत कराया। डोम्बारी आंदोलन का प्रमुख केन्द्र बन गया।[१४]

एक योजना के अनुसार सदल बल २८ जनवरी १८९८ को राँची के पास स्थित चुटिया गये। यहाँ उनका उद्देश्य मंदिर के साथ मुण्डों का सम्बन्ध सिद्ध करना था। उनका दावा था कि यह मंदिर पुराने जमाने में कोलों का था। कहा जाता है कि कुछ बिरसापंथियों ने यह हिन्दू मंदिर अपवित्र कर दिया। मंदिर केअन्दर उन्होंने नाच किया, उसकी मूर्तियों का उखाड़ कर फेंक दिया और तोड़ डाला। इससे हिन्दू बिगड़ खड़े हुए और कुछ अपराधियों को पकड़ लिया। गिरफ्तार मुण्डों ने बयान दिया कि जो कुछ उन्होंने किया वह बिरसा की प्रेरणा से किया था अपने मन से नहीं। इस पर बिरसा की गिरफ्तारी के लिए हुक्म जारी हो गया। किन्तु बिरसा हाथ न आये।[१५]

बिरसा दो साल तक गुप्त रूप से अपना काम करते रहे और लोगों को अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह के लिए तैयार करते रहे। इसी गुप्तवास के दौरान वे जगन्नाथपुर के मंदिर गये। कहा जाता है कि वहाँ वयोवृद्ध मुण्डों ने बिरसा को आशीर्वाद दिया और सफलता की कामना की। वे नागफेनी और दूसरे स्थान भी गये। जगह-जगह गुप्त सभाएं कर मुण्डों को विद्रोह करने के लिए तैयार किया जाने लगा। विद्रोह की तैयारी के लिए वे महारानी

विक्टोरिया का पुतला बनाकर उस पर तीरन्दाजी का अभ्यास करते।[१६] इसी दौरान नौजवान बिरसा को बंदी बनाने के लिए महारानी विक्टोरिया की सरकार इनाम घोषित कर दी। राँची और सिंहभूम के डिप्टी कमिश्नर ने बिरसा के गुप्त निवास स्थान का पता लगाने की कई महीने बड़ी कोशिश की, किन्तु वे सफल नहीं हुए।[१७]

सन् १८९९ के अंतिम दौर में युवा एवं प्रभावशाली बिरसा पुनः स्वतंत्र रूप से यहाँ-वहाँ आने-जाने लगे। उनके अनुयायी गाँव-गाँव जाकर लोगों को सरकार के विरूद्ध संगठित करने लगे। बिरसा ने आगे बढ़कर उनका नेतृत्व करना शुरू किया। गया मुंडा से उसे भरपूर सहायता मिली। पंडु मुंडा, जोहन मुंडा, रीढ़ा मुंडा दुःखन स्वासी, हाथी राम मुंडा, डोमका मुण्डा तथा ढियस मुंडा उसके प्रभुत्व साथी के रूप में उभरे।

१८९९ ई. में क्रिसमस के दिन उन्होंने आक्रमण शुरू किया। उनका पहला लक्ष्य ईसाई बने मुण्डों को आतंकित करना और अंग्रेजो के खिलाफ खड़ा करना था। खुन्ती, तमार, बसिया और राँची के थानों में कितने ही स्थानों में उन्होंने हमले किये। इनमे ८ आदमी मारे गये, ३२ पीटे गये और ८९ घर जलाये गये।[१८] विद्रोहियों ने मुरहू के आंग्लिकन मिशिनरी और सरवाड़ा के रोमन कैथोलिकों पर हमले किये। ५ जनवरी १९००ई. तक उनका पहला लक्ष्य पूरा हो गया और उनके आंदोलन का पहला दौर समाप्त हो गया। बिरसापंथियों ने अब घोषणा की कि उनके वास्तविक शत्रु साहब लोग और अंग्रेज सरकार है। इसलिए जो मुण्डे है, चाहे वे ईसाई हो या अन्य किसी पर हमला न किया जाएगा।[१९]

६ जनवरी १९०० ई. को एतकेडीह में गया मुण्डा और उनके आदमियों ने दो कांस्टेबलों को काट डाला। ७ जनवरी को बिरसा के अनुयायियों ने खुन्ती थाने पर हमला किया, उसकी इमारत का एक हिस्सा जला दिया गया, एक कान्सटेबुल को मार डाला और कुछ स्थानीय बनियों के फूस के घरों में आग लगा दी।[२०] ९ जनवरी, १९०० ई. को सरकारी अफसरों को यह खबर मिली कि सईल रकब पहाड़ी पर मुंडाओं की बैठक होने जा रही। सईल रकब जोजोहातू से डेढ़ किलोमीटर दक्षिण की ओर स्थित है। २५ दिसंबर १८९९ से ही लोग बड़ी संख्या में सईल रकब पहुँचने लगे थे। उन्होंने वहाँ अपनी स्थिति सुदृढ़ बना ली थी। चोटी के बीच सांगर बनाए थे। सांगरो की संख्या ११ थी। वे लोग अपने परिवार के साथ इकट्ठे हुए थे जिसमें महिलाओं और बच्चों की संख्या काफी थी। डिप्टी कमिश्नर स्ट्रीटफील्ड और कैप्टेन फौरबेस अपने १५० सशस्त्र पुलिस कर्मियों के साथ सईल रकब की ओर रवाना हुई। पुलिस दल के पीछे सेना की टुकड़ी वहाँ पहुँच गयी। उन्होंने देखा कि पहाड़ के सभी ओर २०० से ३०० फुट सीधी चढ़ाई है, दीवार की तरह। केवल जोजोहातू गाँव की ओर की चढ़ाई बहुत कम थी। कैप्टन फौरबेस ने तिरिलकुटीबुरू में चढ़ने का निर्णय लिया। आंदोलनकारियों का सरकारी सेना के पहुँचने की खबर मिल चुकी थी। सईल रकब में कई गुफाएँ भी है। जाहिर तौर पर आंदोलनकारी सईल रकब को सुरक्षित मोर्चा समझते थे। उन्होंने पहाड़ की चोटी में, सांगरों के पीछे बड़ी संख्या में तीर-धनुष बलुआ इकट्ठा कर रखा था तथा खाना-पकाने के लिए बरतन और चावल आदि भी लेकर वहाँ आए थे। जैसे ही सेना और पुलिस के आदमी दिखाई पड़े चालीस आदिवासी तीर-धनुष लेकर भिड़ने के लिए तैयार हो गए। वे भी नारे लगा रहे थे। नरसिंह मुंडा सामने आया और ललकारता हुआ बोला, 'अब राज हमलोगों का है, अंग्रेजो का नहीं। अगर हथियार रखने का सवाल है तो मुंडाओं का नहीं अंग्रेजों को हथियार डाल देने चाहिए। और यदि लड़ने की बात है तो वे खून की आखिरीबूँद तक लड़ने को तैयार है।' फौरबेस और स्ट्रीटफील्ड अपनी सेनाओं के पास वापस लौटे और कुछ सलाह-मशविरा किया। फिर उन्होंने आंदोलनकारियों की चेतावनी दी कि यदि उन्होंने आत्मसमर्पण नहीं किया , तो गोलियाँ चलायी जाएगी। फिर गोलियों की बौछार बरसाने शुरू किये।[२१] गोलियों की इस बौछार से २०० पुरूष, औरते और बच्चे मारे गये। करीब ३०० लोग बंदी बनाये गये। गोलीबारी में काफी संख्या में मारे गए लोगों को रात में आंदोलनकारी वापस आकर कई मृत आंदोलनकारियों को उठाकर ले गए। यह घटना जालियांवाला बाग की घटना से कम वीभत्स नहीं है लेकिन इतिहासकार इस बाबत चुप ही रहते है।

एक दिन शाम को अपने नन्हें- से बच्चे की किलकारियों में बिरसा खोया हुआ था। इसी बीच अंग्रेजी सरकार द्वारा घोषणा की गयी कि जो बिरसा का सूचना देने एवं गिरफ्तार कराने वाले को ५०० रुपया का ईनाम दिया जाएगा। इनाम के लालच में बनगाँव के जगमोहन के आदमियों वीर सिंह महली आदि ने ३ फरवरी १९०० इ को बिरसा मुण्डा को गिरफ्तार करवा दिया। उसे राँची जेल ले जाया गया।

हजारों आदिवासी जेल के बाहर बैठे रहे और बिरसा का चहेता लोकगीत गाते रहे, जिसका हिंदी अनुवाद इस प्रकार है:-

विशाल नदी में बाढ़ आयी है
आसमान से धूल झड़ रही है
आंधी उमड़-उमड़ रही है
ओ मैना! तू तिनके ला, घर बना

जंगल में तूफान मचा है
धुआँ उठ रहा है
आ मैना! तू डर मत
अपने नन्हे बच्चों के लिए
तू तिनके ला घर बना[२२].....

बिरसा ने उनको कहलवाया- "अगर मुझसे प्रेम करते हो, तो लौट जाओ और अंग्रेजो के विरूद्ध लड़ाई जारी रखों।" बिरसा को चुपके से वहाँ से हजारीबाग जेल भेज दिया गया। यह वही जेल थी, जहाँ बाद में जयप्रकाश नारायण को रखा गया था। अंग्रेजी हुकूमत ने बिरसा के हाथ-पाँव में बेडियाँ डाल दी थी और उससे डटकर काम करवाया जाता था। कुछ लोगों का कहना है कि उसकी रोटी मे कुछ हानिकर पदार्थ मिलाया जाता था, जिससे चीते-सी स्फूर्तिवाला उसका लौह-शरीर कुछ सप्ताह में ही कंकाल हो गया। ५ जून, १९०० ई. को उसको हैजे ने घर दबोचा। हालत बिगड़ती देखकर ८ जून को उसे राँची जेल लाया गया पर उसकी अंतड़ियाँ तार-तार हो चुकी थी जिससे वह संभल नहीं सका। ९ जून १९०० ई. की सुबह ९ बजे इस वीर विद्रोही ने उसकी आखिरी सांस ली। बिरसा मुंडा की मृत्यु की प्रतिक्रिया के आतंक से डरे जेलर ने तुरंत ही उसके पार्थिव शरीर को राँची के ही एक उपनगर कोकर मे स्वर्णरेखा नदी के किनारे जलवा दिया। उसकी मौत का समाचार कई दिनों बाद उसके परिवार को मिला। इस तरह झारखंड का ज्वालामुखी का अंत हुआ। ब्रिटिश सरकार की दमन नीति के कारण बिरसा आंदोलन को कुचल दिया गया लेकिन बिरसा का आंदोलन अविस्मरणीय हो गया। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने इस आंदोलन की प्रशंसा 'बंगाली' नामक पत्रिका में की। इंगलिशमैन, पायोनियर एवं स्ट्रेट्समैन जैसे अखबारों में इस आंदोलन को कुचलने की भर्त्सना की गयी।

इस प्रकार यह कहना कि बिरसा मुंडा एक राष्ट्रवादी था, अतिशयोक्तिपूर्ण होगा; परंतु इस आंदोलन को आदिम पर साम्राज्य विरोधी कहने से इंकार नहीं किया जा सकता। मुण्डा समाज आज भी उन्हे 'बिरसा भगवान' 'धरती आबा' (धरती के पिता), 'विश्वपिता का अवतार' आदि के रूप में याद करता है और उनके गाँव चलकद को तीर्थ-स्थल का दर्जा देता है। बिरसा की वीरता व बलिदान की गाथा अनेक लोक कथाओं व लोक-गीतों में अमर बन चुकी है। वह आज भी आदिवासियों मे नये युग का प्रेरणापुंज है। बिरसा आंदोलन से मुण्डा राज का स्वप्न भले ही पूरा नहीं हो सका लेकिन विद्रोह की आग अंदर-ही-अंदर सुलगती रही, और आने वाले समय में सार्थक हुआ

संदर्भ सूची :-

1. नैमिशराय, मोहनदस; स्वतंत्रता संग्राम के दलित क्रांतिकारी, नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली, २०१६, पृष्ठ-४५
2. सिन्हा, सदन कुमार; गुरूकुल स्पर्श हिंदी पाठ्यपुस्तक, गुरूकुल पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, २०२०, पृष्ठ-४२
3. नैमिशराय, मोहनदास; पृष्ठ ४५-४६
4. दास, प्रमोदानन्द; एण्ड कुमार, अमरेन्द्र; बिहारः इतिहास एवं संस्कृति; लूसेंट पब्लिकेशन, पटना, २००८, पृष्ठ-२०३
5. बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, सिंहभूम, १९५८, पृष्ठ-१००
6. कुमार, अमित ; एण्ड स्नेहलता; बिहार का इतिहास, प्रभात संस्थान, नयी दिल्ली, २०११, पृष्ठ-२२६
7. दास, प्रमोदानन्द; एण्ड कुमार, अमरेन्द्र; पृष्ठ-२०३
8. सिंह, अयोध्या; भारत का मुक्ति संग्राम, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, २०१९, पृष्ठ-४३०-४३१
9. दास, प्रमोदानन्द एण्ड कुमार अमरेन्द्र; पृष्ठ-२०४
10. नैमिशराय; मोहनदास; पृष्ठ-४७-४८
11. कुमार अमित; एण्ड स्नेहलता; पृष्ठ-२२७
12. बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, राँची, पृष्ठ-७०
13. दास, प्रमोदानन्द एण्ड कुमार अमरेन्द्र; पृष्ठ-२०४
14. वही; पृष्ठ-२०५
15. सिंह अयोध्या; पृष्ठ-४३१-४३२
16. बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, राँची, पृष्ठ-७०
17. कुमार, अमित एण्ड स्नेहलता; पृष्ठ-२२८
18. बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, राँची, पृष्ठ-७०
19. वही; पृष्ठ-७१
20. वही; पृष्ठ-७१
21. नैमिशराय, मोहनदास; पृष्ठ-४९
22. वही; पृष्ठ'-५०